प्रथम अध्याय

नाटककार का साहित्यिक परिचय ---

पं.रामेश्वर दयाल दुबे : व्यक्तित्व एवं कृतित्व --

प्रख्यात हिन्दी सेवी एवं साहित्यकार पं.रामेश्वर दयाल दुबे का जन्म २१ जून सन् १९०८ में मैनपुरी, उत्तर प्रदेश के हिंदूपुर नामक ग्राम में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। इनके पिता पं.देवीलाल दुबे गाँव के सम्मानित व्यक्ति होने के साथ साहित्य के विशेष प्रेमी एवं हिन्दी तथा संस्कृत के अच्छे विद्वान थे। पिताजी से उन्होंने बच्चपन में तुलसी, कबीर, रहीम के अनेक दोहे तथा संस्कृत के प्रसिध्द नीति-श्लोक कंठस्थ किये। उनकी माँ आदर्श भारतीय महिला थीं। दुबे जी का शैशव जो अधिकाशत: स्नेह के वातावरण में पल्लवित हुआ। उसका सारा श्रेय उनके माता पिता को है।

दुबे जी की बाल्यावस्था में हिंदूपुर के विद्यालय में केवल कक्षा दो तक का ही अध्यापन होता था। इसके बाद कक्षा चार तक की शिक्षा दुबे जी ने वहाँ से लगभग दो मील दूर अर्जुनपुर तथा ढाई मील दूर विशुनगढ स्थित शिक्षालयों से ग्रहण की। इस अवधि में वे घर से विद्यालय तक पैदल आते - जाते रहे। यहाँ तक स्थिति सामान्य ही रही, किंतु परवर्ती शिक्षा पाना आसान नहीं था। अत: छोटी सी अवस्था में ही उन्हें माता - पिता के सानिध्य से दूर अकबरपुर में अपने पिता की बहन के पास रहना पडा। छिबरामऊ स्थित स्कूल यहाँ से भी लगभग तीन मील दूर था और दुबे जी को प्रतिदिन यह श्रम साध्य यात्रा करनी पडती थी।

दुबेजी के बाल्यकालमें संपूर्ण देश में स्वाधीनता प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन जन जागृति एवं नवोन्मेष का निकष बना हुआ था। हिंदूपुर जैसी देहात में भी जागरण की आंधी आयी हुई थी। उस समय कानपुर से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र `प्रताप` में रोचक एवं प्रेरक कवितायें छप जाती थीं। दुबे जी इन्हें बड़े उत्साह से पढ़ते। दुबे जी की माध्यमिक शिक्षा मैनपुरी में बड़े भाई की अभिरक्षा में हुयी। दिल्ली में दरियागंज स्थित कॉमर्स कालेज में उनकी परवर्ती शिक्षा प्रारम्भ हुई। इण्टर की परीक्षा दुबे जी ने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसी अवधि में उनका विवाह फर्रुखाबाद जनपद के सौरिख नामक गाँव के एक सम्भ्रान्त परिवार की सुयोग्य कन्या के साथ हुआ। इसके बाद उन्होंने दिल्ली के ही काश्मीरा गेट के हिन्दु कॉलेज से कला स्नातक की उपाधि प्राप्त की। स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त दुबे जी की इच्छा शिक्षक बननेकी थी। आगे की पढ़ाई वे आत्मनिर्भर होकर करना चाहते थे। किन्तु प्रशिक्षित न होने के कारण उन्हें अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिली। कालान्तर में दुबे जी ने व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूपमें साहित्यरत्न और एम.ए.की परीक्षायें उत्तीर्ण की। इसके बाद चिरगाँव पहुचने का लाभ मिला, जहाँ आप राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त तथा सियारामशरण गुप्त के सम्पर्क में आयें। दुबेजी के मन में शिक्षक बनने की प्रबल इच्छा तो थी ही, उन्होंने इलाहाबाद जाकर आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करनेका निश्चय किया, किंतु इस कार्य में उन्हें सफलता नहीं मिली। उस समय प्रयाग में राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन जी रहते थे। दुबे जी से उनका परिचय पहले ही सन १९३३ में हो चुका था। टण्डन जी ने उन्हें वर्धा में रहकर हिन्दी प्रचार का कार्य करने की सलाह दी। उन्होंने यह भी जानकारी दी कि गांधी जी की देखरेख में हिन्दी प्रचार समिति की स्थापना हुई। `यदि तुम वर्धा जाकर यह कार्य करोगे,तो मुझे प्रसन्नता होगी।`

सौभाग्य से उस समय दुबे जी के सहपाठी श्रीमननारायण गांधी जी के

पास रह कर वर्धा में काम कर रहे थे। दुबे जी ने उनसे पत्र व्यवहार किया। उन्होंने दुबे जी को वर्धा आने का निमन्त्रण दिया। वे वर्धा पहुँचे। श्रीमन - नारायण जी के साथ उन्होंने गांधी जी के दर्शन किये। काकासाहेब कालेलकर, आचार्य विनोबा भावे, सेठ जमनालाल बजाज आदि महापुरूषोंसे मिले। वर्धा के त्यागमय ,सात्विक जीवन से उन्हें अत्यधिक प्रभावित किया।

स्वतंत्रता आंदोलन का जो वातावरण दुबे जी को बाल्यावस्थामें प्राप्त हुआ था, वह उनके विद्यार्थी जीवन के उत्तरार्ध में संस्कार का स्वरूप लेकर अधिकाधिक भास्वर हो उठा। अत: महात्मा गांधी के आकर्षण से प्रभावित होकर उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन के अन्तर्गत रचनात्मक सहयोग करने का निश्चय किया और अपने बड़े भाई का आशीर्वाद लेकर वर्धा के लिए १९३७ के प्रारंभ में प्रस्थान किया।

वर्धा में दुबे जी को नवभारत विद्यालय एवं हिन्दी प्रचार समिति दोनों ही स्थानों में एक साथ कार्य करना पड़ा। उनके कठोर परिश्रम और कर्तव्य निष्ठा का ऐसा व्यापक प्रभाव पड़ा, कि विद्यालय के आचार्य आर्यनायकम् और समिति के कार्याध्यक्ष काकासाहेब कालेलकर में से कोई भी उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं था। उधर दो संस्थाओं का श्रमसाध्य कार्य करते हुए दुबेजी को अपना कार्यक्षेत्र अनिश्चित - सा लग रहा था। कालान्तर में काकासाहेब के प्रयास से उन्हें समिति में स्वतंत्र रूप से कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। उस समय राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर के प्रधानाध्यापक हिन्दी-प्रचार के पुराने कार्यकर्ता पं.हृषीकेश शर्मा थे। उनके अनुरोध से दुबे जी को छात्रावास के व्यवस्थापक का कार्य भी देखना पड़ा। गांधीजी के आदर्श से अनुप्राणित अध्यापन मंदिर आश्रम पध्दति पर संचालित था। अत: सारा कार्यक्रम प्रात: ४ बजे से प्रारम्भ हो जाता। सामूहिक प्रार्थना, सूत कताई, विशिष्ट व्यक्तियों के व्याख्यान दैनिक खेलकूद, सायंकालीन प्रार्थना आदि अनेक कार्यक्रम वहाँ नित्य होते थे , जिनका संपूर्ण संचालन व्यवस्थापक के रूप में दुबे जी को करना पड़ता था।

समिति ने कुछ समय उपरान्त ही परीक्षा संचालन का कार्य भी प्रारंभ कर दिया । इसके लिए पहले एक पाठयक्रम निर्धारित किया गया, फिर उसीके अनुरूप पाठय पुस्तके तैयार करनेका कार्यक्रम बना । उस समय परीक्षामन्त्री का दायित्व दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के कर्मठ कार्यकर्ता श्री हरिहर शर्मा पर था । उन्होंने पाठय पुस्तकोंके सम्पादन का महत्वपूर्ण कार्य दुबे जी को सौंपा । उनकी अनुपस्थिति या दौरों की कालावधि में उनका संपूर्ण दायित्व भी दुबे जी को ही संभालना पड़ता था । इस प्रकार समिति के उच्चाधिकारियों को प्रत्येक कार्य के लिए दुबे जी की सहायता अपेक्षित रहती । इससे उनका महत्व निरंतर बढ़ता गया ।

राष्ट्रीय दृष्टिकोण से वर्धा उन दिनों भारतवर्ष की अघोषित राजधानी थी । गांधी जी का सेवाग्राम आश्रम वहीं स्थित था । उसमें मिलने के लिए देशविदेश के अनेक नेता एवम् महापुरूष वहाँ प्राय: आया करते थे । अत: दुबे जी को राजेन्द्र बाबू, सुभाषचन्द्र बोस, आचार्य कृपलानी, महादेवभाई सर राधाकृष्णन्, राजगोपालाचार्य प्रभृति अनेक महापुरूषोंका साहचर्य प्राप्त हुआ । इससे उनके विचारों को नवीन दिशा मिली और वे जीवन कर्म को चरित्र के आदर्श निदर्शनके अनुरूप ढालने की ओर वे जीवन-कर्म को चरित्र के आदर्श अनुरूप ढालने की ओर प्रवृत्त हुये । दुबे जी के सदप्रयास से महात्मा गांधी ने अध्यापन मन्दिर के लिए प्रत्येक रविवार को प्रात: अपना अमूल्य समय देना स्वीकार किया । इन पन्द्रह मिनटों में गांधीजी अध्यापन मन्दिर संबंधी विविध जानकारी प्रश्नोंद्वारा प्राप्त करते और सुझाव देते थे । गांधी जी कहते है हिन्दी प्रचार तो राष्ट्रसेवा का काम है । उसे पूरी निष्ठा से पूरा करना चाहिए ।

राष्ट्रभाषा अध्यापन मंदिर में पाँच वर्ष तक दुबे जी ने अध्यापक और व्यवस्थापक का काम किया । इसी अवधि में सन १९३८ से १९४० तीन वर्ष तक समिति कार्यालय के निकट स्थित ` वासुदेव आर्टस कालेज ` (वर्धा) में

कालेज मैनेजमेन्ट के अनुरोध पर काकासाहब की इच्छानुसार अवैतनिक हिन्दी प्रोफेसर की हैसियत से श्री. दुबे जी ने अपनी सेवायें दीं, जहाँ इण्टर और बी.ए. के छात्रों को पढाते रहें।

राष्ट्रभाषा अध्यापन मन्दिर सन १९४२ तक विधिवत चलता रहा। इस अवधि में हिन्दीतर प्रदेशों के लगभग डेढ सौ प्रचारकों ने वर्धा आकर दस-दस माह का प्रशिक्षण प्राप्त किया। पाँच वें सत्र की समाप्ति के साथ ही कार्याध्यक्ष काकासाहेब कालेलकर जी ने अध्यापन मन्दिर को बन्द करने का निर्णय किया। अत: इस कार्य में लगे कर्मचारियों की सेवाओं का भी अन्त हो गया।

वर्धा से श्रीमतनारायणजी का एक तार मिला, कि वे यथाशीघ्र इलाहाबाद में श्री. पुरूषोत्तमदास टण्डन से मिले। अत: उन्हें बाध्य होकर इलाहाबाद जाना पडा वहाँ श्री टण्डन जी ने उन्हें पुन: वर्धा आकर समिति के सहायक मन्त्री के रूप में कार्य करने हेतु आदेश दिया। दुबे जी को यह अच्छा नहीं लग रहा था। क्योंकि वर्धा से लौटकर उन्होंने अपनी दूसरी योजना बना ली थी। टण्डन जी के आग्रह के सामने स्पष्टरूप से कुछ कहने की स्थिति में भी वे नहीं थे। टण्डन जी के आदेश पर वे उदयनारायण तिवारी और बौध्दभिक्षु कौसल्यायन से भी मिले। अन्तत: उन्हें वर्धा जाकर पुन: समिति का कार्यभार ग्रहण करने हेतु बाध्य होना पडा।

दुबे जी के वर्धा पहुँचने के तीन दिन बाद सेवाग्राम स्थित गांधी जी की कुटी में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की एक बैठक तारीख १२-६-१९४२ को थी। टण्डन जी की अध्यक्षता में हुई। जिसमें आनन्द कौसल्यायन जी को समिति का मंत्री रामेश्वर दयाल दुबे जी को सहायक मंत्री और परीक्षा मंत्री मनोनीत किया गया। परंतु प्रारंभ के दो तीन वर्ष तक श्री कौसल्यायनजी का वर्धा रहना अधिक न हो सका। मुख्यत: दुबे जी को ही समिति की संपूर्ण व्यवस्था का भार उठाना पडा। समिति का काम चल पडा था, उन्नति हो रही थी।

इस अवधि में दुबे जी को एक वज्राघात सहना पड़ा । पत्नी का चिर-वियोग हो गया । एक वर्ष तक दुबे जी अव्यवस्थित रहे । परिजनों के आग्रह के कारण जीवन से समझौता करते हुए उन्होंने सन १९४३ में अपना दूसरा विवाह किया । उससे उन्हें जीवन पथ पर चलने में अधिक प्रेरणा मिली ।

सहायक मंत्री और परीक्षा मन्त्री का भार ग्रहण करने के बाद सन १९४२ से दुबे जी अपनी निष्ठा और लगन के कारण समिति के कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहने लगे थे । उनका जीवन और समिति का जीवन एक हो गया था । वर्ष में दो बार परीक्षा की व्यवस्था करनी पड़ती थी, लाखों विद्यार्थी परीक्षाओं में बैठते थे, हजारों प्रचारकों और केन्द्र - व्यवस्थापकों से संबंध रखना पड़ता था । वर्धा कार्यालयका कार्य तो वे देखते ही थे , हिन्दी - प्रचार के लिए सारे देश में उन्हे परीक्षामन्त्री के रूप में घूमना भी पड़ता था ।

सन १९५१ में समिति को उस समय संकटकालीन परिस्थिति का सामना करना पड़ा, जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के एक प्रभावशाली गुट से संबंध जोड़कर साम्यवादी विचारधारा वाले समिति के कुछ कार्यकर्ताओं ने वर्धा समिती पर अपना वर्चस्व स्थापित करनेका प्रयत्न किया । समिति के मन्त्री श्री आनन्दजी का ही विरोध करने लगे । इस संकटग्रस्त परिस्थिति में दुबे जी ने बड़ी सूझबूझ से काम किया और कार्य समिति के सदस्यों के सहयोग से समिति के अस्तित्व की रक्षा की । नये मन्त्री श्री मोहनलाल भट्ट के साथ दुबे जी ने २० वर्ष तक समिति के काम को आगे बढाया ।

समय-समय पर आने वाली कठिनाइयों को दृढतापूर्वक सामना करते हुए दुबे जी ने राष्ट्रभाषा प्रचार,प्रसार एवं महत्व को उस स्थानतक पहुँचा दिया,जहाँ संस्था स्वयम् एक मानदण्ड का पर्याप्त बन जाती है । इसप्रकार हिन्दी-सेवा और हिन्दी-प्रचार को जीवन का उद्देश्य और समिति को अपनी कर्मभूमि मानकर दुबे जी ने सन १९७८ तक पूरी निष्ठा एवं परिश्रम से अपने

उत्तर दायित्वों का निर्वाह किया । इस काल में प्रतिदिन नियमित रूप से दो घण्टे के समय की अनिवार्य बचत करते हुए उन्होंने हिन्दी की अनेक विधाओं पर प्रचुर साहित्य भी रचा है । ऐसे बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी दुबे जी सम्भवत: जीवन पर्यन्त राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की सेवा करते रहते, यदि जीवन की कतिपय त्रासद अनुभूतियोंका सामना न करना पडता । वर्तमान अति यथार्थवादी युग में जहाँ आदर्श और सिध्दांत के आशयकों को प्रतिपल अनेक विरोधी विसंगतियों एवं चुनौतियों से टकराना पडता है, वहीं दुराग्रह एवं अपमान का विष पीना कभी-कभी उनके आत्माभिमानी स्वभाव के लिए असह्य हो जाता है । ऐसी ही व्यथा का गुरुतर भार लेकर दुबे जी ने समिति को उसी प्रकार स्वतन्त्र छोड दिया जिस प्रकार एक पिता अपने सक्षम पुत्र को आत्मनिर्भर बनने हेतु छोड देता है । इस प्रकार अपने त्यागपत्र द्वारा समिति को अलविदा कह कर अपने गृह प्रदेश लौट आये ।

आज वे 'चित्रकूट' निराला नगर लखनऊ में एक नि:स्पृह जीवन व्यतीत कर रहे हैं । किन्तु यहाँ भी उनका हिन्दी-प्रचार कार्य एवं साहित्य - साधना बन्द अथवा मन्द नहीं हुई है, अपितु अब वह कहीं अधिक उबर हो उठी है ।

गान्धीवादी जीवन मूल्यों से अनुप्रेरित पं.रामेश्वर दयाल दुबे राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचारकों और रचनाकारों की उस पीढी का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसमें नि:स्वार्थ भाव से साहित्य-साधना के द्वारा - समाज और राष्ट्र में एक सात्विक ज्योति जलाने का प्रयत्न किया है । राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल , बाबू श्यामसुन्दर दास और अमर कथा शिल्पी प्रेमचन्द्र जैसे साहित्य के महारथियों और श्रध्देय पुरूषोत्तमदास टंडन जैसे हिन्दी के अनन्य पक्षधरों की सत्प्रेरणा और आशीषों की पूँजी लेकर हिन्दी भाषा के प्रचार हेतु दुबे जी सन १९३७ में वर्धा गये थे । वर्धा में पूज्य बापू का निकट सम्पर्क तथा राष्ट्रभाषा प्रचार

समिति की सेवा ने दुबे जी की रचनात्मक प्रतिभा को धार दी है। उनकी रचनाधर्मिता का बीज वर्धा की त्याग और तपस्यापूर्ण मिट्टी में फूटा है।

राष्ट्रीयता ही दुबे जी के जीवन का मूलमन्त्र है और उसी के प्रकाश में उन्होंने साहित्य की प्राय: सभी विधाओं में अपनी क्षमताओं का परिचय दिया है। यद्यपि उनके आदर्शवादी और भावुक मन को सर्वाधिक परितोष काव्य रचना में मिलता है, लेकिन इसके साथ वे नाटक, बाल साहित्य, एकांकी, कहानी, हास्य प्रधान एवं मनोरंजक साहित्य, जीवनी, संस्मरण, यात्रा वर्णन, गांधी साहित्य, स्फुट निबन्ध लेखन में भी बड़े अधिकार के साथ अपनी सिध्दहस्त कला और शैली का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

साहित्यिक रचनायें --

काव्य

१	अभिलाषा	-	१९३४
२	नि:श्वास	-	१९४४
३	कोणार्क (खण्डकाव्य)	-	१९६०
४	सौमित्र (खण्डकाव्य)	-	१९६६
५	नूपुर (खण्डकाव्य)	-	१९७४
६	अबोल के बोल	-	१९७५
७	भाषा भगिनी	-	१९७५
८	चित्रकूट (खण्डकाव्य)	-	१९७८
९	पंचप्रभा	-	१९८१
१०	माटीकी महक	-	१९८२
११	सप्तकिरण	-	१९८७
१२	बैढे ठाले	-	१९८७
१३	गोकुल (खण्डकाव्य)	-	१९८९।

कहानी

१	बात तो थी	-	१९६४
२	भारत की प्रणय कथाएँ	-	१९८६ ।

हास्य --

१	आलूचना	-	१९५३
२	पिकनिक (कविता)	-	१९६६ ।

जीवनी --

१	महात्मा गांधी पुरस्कार	-	१९६९
	प्राप्त कर्ता	-	१९६९
२	भारत के रत्न	-	१९८०
३	बाबा राघवदास	-	१९८८
४	राजर्षि पुरूषोत्तमदास	-	१९८८

गांधी साहित्य --

१	बापू की बातें	-	१९४८
२	जीवन की बूँन्दे	-	१९५२
३	गांधी जीवन झलक	-	१९६७
४	गांधी जीवन दर्शन	-	१९६८ ।

अनुवाद --

१ गांधी आश्रम प्रार्थना

२ मधुकरी

३ तिरुक्कुरळ

४ भ्रमर गीतलु

५ सुमित शतक

अनुवाद ---

६ धम्मपद

७ साने गुरूजी ।

बाल साहित्य --

१ भारत के लाल भाग-३

२ भारत के लाल भाग-४

३ क्या ये सुनी कहानी ?

४ चलेचली

५ कुकडूँकू

६ प्यारे बच्चे

७ माँ यह कौन ?

८ फूल और काँटा

९ डंडा और बाँसुरी

१० बड़े जब छोटे थे

११ बगला सफेद क्यों ?

१२ उत्तर प्रदेश

१३ डाल डाल के पंछी

१४ धरती के लाल

१५ कृष्ण का गोवर्धन धारण

१६ राम कथा

सम्पादित --

१ गुलदस्ता भाग-२ - १९३८

२ गुलदस्ता भाग-३ - १९३८

सम्पादित --

३ रहीम के दोहे - १९४३

४ मुहावरे कहावतें - १९४५

५ श्री राम कथा - १९७८

६ सर्वमान्य हिन्दी - १९८७

नाटक --

१ अगस्त्य - १९६२

२ ऋतुचक्र - १९६४

३ साँची के स्वर - १९७३

४ बहादुर शाह जफर - १९८४ ।

एकांकी --

१ सप्तवर्णा - १९६४

२ नर्मदा - १९८० ।

अन्य पुस्तकें ---

१ स्वर्णांकिता राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का इतिहास

२ दक्षिण दर्शन

३ धर्म अनेक हम सब एक

४ श्रम कक्षायें

५ अन्धविश्वासों की आँधी ।

नाटक

१ ऋतुचक्र --

इस छोटे से नाटकमें लेखक ने अपनी अनुपम सूझ का परिचय दिया है। ऋतुओंका मानवीकरण किया गया है। पृथ्वी माँ है, ग्रीष्म बडा भाई, वर्षा बहन और शरद, हेमन्त शिशिर, तथा वसंत चार छोटे भाई हैं। वार्तालाप द्वारा ऋतुओंका संपूर्ण परिचय प्रस्तुत किया गया है, जो मनोरंजक है।

ऋतुओंमें चेतना का सौन्दर्य भरकर दुबेजीने प्रत्येक की विशेषता अत्यंत स्वाभाविक --- ढंगसे उपस्थित की है। छोटे छोटे बालक भी उसमें इस लेकर अभिनय के क्षेत्र में उत्तर सकते हैं।

२ अगस्त्य --

' अगस्त्य ' के अंतर्गत नाना चमत्कारों को वैज्ञानिक रूप देकर नाटक के इतिहास में एक नया मोड दिया गया है। इसमें अगस्त्य की महिमामयी जीवनी की गौरव गाथा है।

३ साँची के स्वर --

पाँच एकांकियोंकी संसृष्टि हैं। ये एकांकी सब ऐतिहासिक कथा-सूत्र से जुडे हुए है जिसमें साँची के सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक, धार्मिक, एवं राष्ट्रीय उत्कर्ष का भावात्मक निरूपण है। साँची बौध्द धर्म का एक महत्वपूर्ण प्रतिष्ठान रहा है। राजकुमार अशोक के जीवन का यह संयोग ही था, कि वे उज्जैन के ' कर मौलि ' नियुक्त हुए और उन्होंने विदिशा के श्रेष्ठि की पुत्री महादेवी से विवाह किया। पत्नीकी इच्छा नुसार ही उसके निवास स्थान साँची का वैभव जगमगा उठा और वहाँ भिक्षु सारिपुत्र और मोग्गलान के अस्थि अवशेष सचित किये गये।

४ बहादुर शाह जफर --

यह ऐतिहासिक नाटक है। भारतकों स्वतन्त्र करने के लिए इ.स.१८५७ में होनेवाला पहला युध्द था। राजा महाराजा, नबाब, ताल्लुकेदार, रानियाँ - बेगमें, सारी जनता अँग्रेजों के खिलाफ उठ खडी हुई थीं। इस स्वतन्त्र आंदोलन के नेता - बने थे दिल्ली के सम्राट बहादुरशाह। एकता, स्वाभिमान, देश-प्रेम का प्रतीक और सशक्त प्रेरणा का अजस्त्र स्त्रोत है। करूण प्रसंग वाले इस नाटक की प्रस्तुति दुबे जी की राष्ट्रीय स्वातंन्त्र्य की भावना का ज्वलंत प्रमाण है।

५ सप्तपर्ण --

इसके अंतर्गत सात एकांकी हैं। इनकी पात्र परिकल्पना निराली है। इनका सम्बन्ध सोना, चांदी, मिट्टी, रंगों, व्याकरण, विराम चिन्हों, गणित, रेखागणित तथा प्रकृति आदि से है। यह कृति नैतिक विचारों से ओतप्रोत है।

६ नर्मदा --

१४ एकांकियों का संग्रह है, ` नर्मदा `। इसके सभी पौराणिक एवं ऐतिहासिक एकांकी प्रभावशाली, शोधपूर्ण भावना से भावित होकर लिखे गये है। इनका सरल ढंग से मंचन किया जा सकता है।

७ कुकुडूँ-कूँ --

इसके अंतर्गत १२ बाल एकांकियों की सर्जना की गई है, जिसमें बाल-रुचि का पर्याप्त ध्यान रखा गया है।

८ भाषा भगिनी --

इस लघु नाटिका के माध्यम से भारत की प्रमुख भाषाओंकी अपनी अपनी विशेषताओं की बात एक दूसरे के सम्मुख रखवाई है। अन्ततोगत्वा सभी भाषाओं ने हिन्दी की ही महत्ता को स्वीकार करके उसे गौरवान्वित किया है।

काव्य --

१ कोणार्क --

उत्कल प्रदेश के समुद्र तटपर स्थित कोणार्क मन्दिर अपनी अद्वितीय शिल्पकला के लिए प्रसिध्द है। इस मंदिर के साथ एक बडी ही करुण कथा जुडी है। उसीका आधार लेकर भावुकता के साथ इस खंडकाव्य की रचना की गई है। प्रतिभा, कल्पना और इतिहास तीनों से कोणार्क का चढाव ओतप्रोत है। दुबे जी का प्रथम खण्ड काव्य होने पर भी उसने हिन्दी के प्रथम श्रेणी के खंडकाव्यों में स्थान पाया है, लोकप्रिय बना है।

२ सौमित्र --

दुबे जी का यह प्रथम राम काव्य है। रामायण के अन्य पात्रोंद्वारा रामानुज लक्ष्मण का चरित्र उभारा गया है। सौमित्र की भूमिका सुमित्रानंदन पन्त ने लिखा है,

"लक्ष्मण को केन्द्र मानकर इस छोटे से काव्य फलक पर रामायण की समस्त कथा संक्षेप में आ गई है और लक्ष्मण के सभी आयामों की सशक्त अभिव्यक्ति ने इस काव्य को महत्वपूर्ण बना दिया है।" १

---

१ सं. त्रिभुवन नाथशर्मा - रामेश्वर दयाल दुबे - गौरव ग्रंथ - पृ.९८।

३ नूपुर --

इस खण्डकाव्य का कथानक तमिळ साहित्य से लिया गया है । एक भाषा की चीज दूसरी भाषा में प्रवेश पाती जावे - यह देश की एकता के लिए बड़े सैाभाग्य की बात होगी । दुबे जी ने इस दिशामें बहुत कुछ किया है । उनकी भाषा सरल छन्द निर्दोष अैार भाव मनोमुग्धकारी होते हैं । ये सभी गुण इस खण्डकाव्य में विद्यमान है ।

४ चित्रकूट --

राम कथा में महत्व की दृष्टि से चित्रकूट का स्थान अयोध्या से भी आगे है । चित्रकूट वह पूनीत स्थान है, जहाँ कभी मानवीय उदात्त संवेदनाओं का आदर्श प्रस्फुटित हुआ था । चित्रकूट में भगवान राम चित्रकूट प्रवास का वर्णन अत्यंत रोचक उदात्त अैार कवित्वपूर्ण हैं । भाषा अैार भाव की दृष्टि से यह काव्य अत्यंत, सुन्दर बन पडा है । प्राकृतिक सैान्दर्य को शब्दों में उतारने में कवि को अच्छी सफलता मिली है । चित्रकूट शिव काव्य है ।

५ गोकुळ --

कृष्ण जन्म से लेकर कंस वध तक की कथा को इस सद्य: प्रकाशित खंडकाव्य में अंकित किया गया है । कृष्ण कथा के तथाकथित चमत्कारों को बोधगम्य रूप देना इसका विशेषता है ।

६ अभिलाषा --

शुभ संकल्पों को समेटे २६ पदों की छोटी पुस्तिका । कंठाग्र करने के हेतु बच्चों में नि:शुल्क वितरण के लिए प्रकाशित ।

७ नि:श्वास --

असमयवज्रघात से मर्माहत हृदय के शोक सन्तप्त बारह करूण गीत । कविता का प्रधान गुण सरसता हृदय-ग्राहिता और भावुकता है । भाषा सरल, सुबोध और ललित है । कवि के हृदय की वेदना प्रकट करने में पूर्ण सफलता पायी है ।

८ माटी की महक --

ग्राम - जीवन की शुध्द - बुध्द हार्दिकता से सराबोर कवि ने अपनी सहज मार्मिकता से ग्राम्य जीवन तथा उसके परिवेश को मूर्तिमान करने का सुन्दर प्रयत्न इसमें किया है ।

दुबे जी का सरल व्यक्तित्व आडम्बर भरी पश्चिमी सभ्यता की भौतिकता से उब कर ग्रामजीवन के स्वच्छ, निर्मल, नि:स्वार्थ मानवीय सौहार्द गोदी में लौटने के लिए लालायित प्रतीत होता है ।

९ पंचप्रभा --

इस ग्रंथ में महासती सीता, उर्मिला, राधा, द्रौपदी, और यशोधरा की जीवन गाथा से बड़े मर्मस्पर्शी चित्र काव्य चित्रित किये हैं । दुबेजी की काव्य दृष्टि पात्रों की अनन्त संवेदनाओं तक पहुँची है और उन्हें सरस, सुबोध भाषा में अभिव्यक्ति करती है ।

१० सप्तकिरण --

भारतीय संस्कृति में नारियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है । इसमें सात भारतीय नारियों की यशोगाथा गाई गयी है - माऊई, सती जयमती, जसमा, पन्नाधाय, रानी दुर्गावती, रानी चेत झा और महारानी लक्ष्मीबाई । दुबेजी को

दृष्टि के सम्मुख मात्र कोई विशेष प्रदेश नहीं संपूर्ण भारत रहता है। उनको यह व्यापक दृष्टि वंदनीय है।

११ बैठे ठाले --

दुबे जी ने बैठे ठाले ६१०० मुक्तक लिखे हैं, उनमें चिन्तन है, मनोरंजन है और विनोद भी।

हास्य - काव्य --

१ आलूचना --

दुबेजी हास्य लिखने में भी निपुण हैं। उनका हास्य शिष्ट, रोचक और गुदगुदा देने वाला होता है। गद्य और पद्य दोनों में ही उन्होंने हास्य साहित्य की रचना की है। इ.स.१९५३ में पुणे से प्रकाशित प्रथम कृति है। 'आलूचना' में परीक्षार्थियों की सामग्री का भरपूर प्रयोग हुआ है।

२ पिकनिक --

सन् १९६६ में पिकनिक के नाम से उनकी हास्यरस परक कविताओंका संग्रह प्रकाशित हुआ। हास्य रसके प्रख्यात कवि 'बेधड़क बनारसी' ने 'पिकनिक जरूरी है' शीर्षक से इस संकलन की भूमिका लिखी थी। दुबे जी के हास्य का उद्देश्य किसी (व्यक्ति) की खिल्ली उड़ाना नहीं बल्कि विशुध्द मनोरंजन करना था।